

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 2: राजा निमि तथा नौ योगीन्द्र

14 September 2026



एक प्राचीन सभा में, नौ तेजस्वी ऋषि-भ्राता — ऋषभ से उत्पन्न योगीन्द्र — प्रबुद्ध राजा निमि के यज्ञ में पधारते हैं, और राजा अपने समस्त ऋत्विजों सहित उनके स्वागत के लिए उठ खड़े होते हैं तथा वही एक प्रश्न पूछते हैं जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है: मनुष्य को शाश्वत कल्याण की ओर कौन-सा मार्ग ले जाता है?

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। यह सुनकर कि भगवान् श्रीकृष्ण ने कैसे मौन भाव से अपने ही कुल के प्रस्थान की व्यवस्था की, राजा परीक्षित अब श्रीशुकदेव गोस्वामी से एक ऐसा अध्याय सुनते हैं जो इतिहास से मुड़कर आध्यात्मिक जीवन के मर्म की ओर जाता है। यह कथा के भीतर एक कथा है: देवर्षि नारद, द्वारका में वसुदेव के यहाँ पधारकर, विदेह के प्रबुद्ध राजा निमि तथा नौ सिद्ध ऋषियों — योगीन्द्रों — के मध्य हुए एक प्राचीन संवाद का स्मरण करते हैं, जो भागवत-धर्म का रहस्य प्रकट करता है — वह भक्ति-मार्ग जो मनुष्य को समस्त भय से मुक्त कर देता है। इस द्वितीय अध्याय में भागवत शुद्ध भक्ति के उन कोषों को खोलने लगता है जो आगे आने वाली उद्धव-गीता में पूर्णतः पुष्पित होंगे।

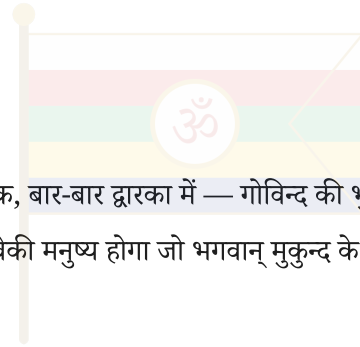
अध्याय-पारेचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 2 (द्वितीय अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: राजा निमि तथा नौ योगीन्द्रों का मिलन
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए; कथा के भीतर, नारद वसुदेव को राजा निमि के समक्ष कवि तथा हवि नामक ऋषियों के वचन सुनाते हैं
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित; कथा के भीतर, वसुदेव, तथा राजा निमि अपनी सभा सहित
- मुख्य स्थान: द्वारका (नारद का वसुदेव के यहाँ आगमन) तथा, स्मृत कथा में, प्राचीन अजनाभ (भारतवर्ष) में राजा निमि का यज्ञ-मण्डप
- मुख्य विषय-वस्तु: वह भक्ति-मार्ग (भागवत-धर्म) जो भगवान् को प्रसन्न करता है तथा आत्मा को समस्त भय से मुक्त करता है, और भगवान् के सच्चे भक्त के लक्षण
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 1-55
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

नारद का द्वारका-आगमन

श्रीशुकदेव आगे बताते हैं कि देवर्षि नारद, सदा श्रीकृष्ण की सेवा के लिए उत्सुक, बार-बार द्वारका में — गोविन्द की भुजाओं से रक्षित उस नगरी में — निवास करते थे। श्रीशुकदेव कहते हैं, स्वस्थ इन्द्रियों वाला ऐसा कौन विवेकी मनुष्य होगा जो भगवान् मुकुन्द के चरण-कमलों की — ब्रह्मा तथा श्रेष्ठ देवताओं द्वारा भी वन्दित उन चरणों की — पूजा उपेक्षित करे?

ऐसे ही एक अवसर पर नारद कृष्ण के पिता वसुदेव के घर पधारे। वसुदेव ने ऋषि का स्वागत किया, उनकी पूजा की तथा उन्हें सुखपूर्वक आसन दिया, और फिर, विनम्रता से, अपना हृदय खोला।





देवर्षि नारद, द्वारका में वसुदेव के घर स्वागत तथा पूजित होकर, उन धर्मों को प्रकट करने के लिए प्रार्थित किए जाते हैं जो भगवान् को प्रिय हैं (श्लोक 3-7)।

वसुदेव का प्रश्न

वसुदेव ने विचार किया कि सन्तों का आगमन समस्त प्राणियों के लिए वरदान है — जैसे माता-पिता का संचरण अपनी सन्तान के कल्याण के लिए होता है। उन्होंने कहा, देवता तो अपने-अपने कर्म के अनुसार सुख और दुःख दोनों दे सकते हैं, कर्ता की छाया-समान उसका अनुसरण करते हुए; किन्तु सन्त, भगवान् में पूर्णतः समर्पित, बिना गुण-अवगुण का विचार किए दुखियों पर करुणा करते हैं। इसी भाव से उन्होंने अपनी प्रार्थना की।

ब्रह्मन्तथापि पृच्छामो धर्मान् भागवतांस्तव ।

याञ्छुत्वा श्रद्धया मर्त्यो मुच्यते सर्वतोभयात् ॥ ७ ॥

brahmaṁs tathāpi pṛcchāmo dharmān bhāgavatāṁs tava yāñ chrutvā śraddhayā martyo mucyate sarvato bhayāt

अर्थ: हे ब्राह्मण, अतः हम आपसे उन भागवत-धर्मों का वर्णन करने की प्रार्थना करते हैं जो भगवान् को प्रसन्न करते हैं — जिन्हें श्रद्धापूर्वक सुनकर मनुष्य समस्त भय से मुक्त हो जाता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 7)

वसुदेव ने स्वीकार किया कि पूर्व जन्म में उन्होंने शाश्वत, मुक्तिदायक भगवान् की पूजा केवल एक योग्य पुत्र के वरदान के लिए की थी, न कि स्वयं मुक्ति के लिए, क्योंकि वे भगवान् की माया से मोहित थे। अब, उन्होंने विनती की, ऋषि उन्हें ऐसा उपदेश दें जिससे वे इस भयपूर्ण, चारों ओर से दुःख से घिरे सांसारिक अस्तित्व से सहज एवं निश्चित रूप से मुक्त हो सकें।

नारद एक प्राचीन कथा का स्मरण करते हैं

प्रसन्न होकर तथा भगवान् के गुणों का स्मरण पाकर, नारद ने इस प्रश्न की प्रशंसा की: भक्ति का यह मार्ग, उन्होंने कहा, तत्काल पवित्र कर देता है — चाहे इसका श्रवण हो, कीर्तन हो, ध्यान हो, आदरपूर्वक स्वीकार हो, अथवा दूसरों द्वारा आचरित देखकर केवल अनुमोदन ही हो। इसी सन्दर्भ में उन्होंने विदेह के उच्चात्मा राजा निमि तथा ऋषभ के प्रबुद्ध पुत्रों के मध्य हुए एक प्राचीन संवाद का स्मरण किया।

नारद ने उनकी वंश-परम्परा बताई: स्वायम्भुव मनु से प्रियव्रत, फिर आग्नीध्र, फिर नाभि, और फिर ऋषभ हुए — भगवान् वासुदेव के एक अंशावतार, जो मुक्ति की ओर ले जाने वाले संन्यास-मार्ग के प्रचार हेतु प्रकट हुए। ऋषभ के सौ पुत्र थे, सभी वेदों में निष्णात। उनमें ज्येष्ठ थे महान् भक्त भरत, जिनके नाम पर यह पावन भूमि विख्यात हुई। शेष पुत्रों में से नौ नौ द्वीपों के शासक बने, इक्यासी पवित्र कर्मकाण्ड में लगे ब्राह्मण बने, और अन्तिम नौ परम भाग्यशाली ऋषि बने — नग्न एवं मुक्त, आत्म-ज्ञान में प्रतिष्ठित।

उनके नाम थे — कवि, हवि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस, और करभाजन। सम्पूर्ण जगत् को, स्थूल तथा सूक्ष्म, भगवान् से तथा अपने ही आत्मा से अभिन्न देखते हुए, वे इच्छानुसार लोकों में विचरण करते थे, किसी स्थान या प्राणी में अनासक्त।



ऋषभ के नौ सिद्ध पुत्र, समस्त सृष्टि को भगवान् से अभिन्न देखते हुए, किसी स्थान या प्राणी में अनासक्त रहकर लोकों में स्वच्छन्द विचरण करते हैं (श्लोक 19-23)।

नौ ऋषि राजा निमि के यज्ञ में पधारते हैं

एक दिन ये नौ ऋषि स्वयं अपनी इच्छा से प्राचीन अजनाभ भूमि में राजा निमि द्वारा किए जा रहे एक महान् यज्ञ में पधारते हैं। उन्हें आते देख — सूर्य-समान तेजस्वी तथा भगवान् में गहन अनुरक्त — राजा, पवित्र अग्निर्थाँ, तथा यज्ञ करने वाले ब्राह्मण सब एक साथ स्वागत के लिए उठ खड़े हुए। उन्हें नारायण के महान् भक्त पहचानकर राजा निमि ने उनकी वरिष्ठता-क्रम से पूजा की और, विनम्रता से झुककर, उनसे अपने प्रश्न पूछे।



राजा निमि, अपने ऋत्विजों तथा पवित्र अग्नियों सहित, उन नौ सूर्य-समान ऋषियों के स्वागत तथा पूजन के लिए उठ खड़े होते हैं जिन्होंने उनके यज्ञ को सुशोभित किया (श्लोक 25-27)।

राजा निमि का प्रश्न

राजा निमि ने निष्कर्ष निकाला कि ये अवश्य ही भगवान् विष्णु के साक्षात् पार्षद हैं, क्योंकि भगवान् के भक्त लोकों को पवित्र करने के लिए विचरण करते हैं। उन्होंने कहा, मनुष्य-शरीर एक दुर्लभ उपहार है और वह भी क्षणभंगुर; और उससे भी दुर्लभ है, मानव-जीवन में, ऐसे भक्तों का मिलना। अवसर को पहचानकर उन्होंने पूछा कि स्थायी कल्याण किससे प्राप्त होता है।

अत आत्यन्तिकं क्षेमं पृच्छामो भवतोऽनघाः ।

संसारेऽस्मिन् क्षणार्धोऽपि सत्सङ्गः शेवधिर्नृणाम् ॥ ३० ॥

ata ātyantikaṁ kṣemaṁ pṛcchāmo bhavato 'naghāḥ saṁsāre 'smin kṣaṇārdho 'pi sat-saṅgaḥ śevadhir nṛṇām

अर्थ: हे निष्पाप ऋषियो, अतः हम आपसे परम कल्याण के विषय में पूछते हैं; क्योंकि इस जन्म-मृत्यु के संसार में, आधे क्षण का भी सत्संग मनुष्यों के लिए एक अमूल्य निधि है। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 30)

यदि वे उन्हें सुनने योग्य समझें, तो, उन्होंने प्रार्थना की, भगवान् को प्रिय उन धर्मों का वर्णन करें, जिनसे प्रसन्न होकर वह अजन्मा भगवान् अपने भक्त को अपना स्वरूप ही प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार पूछे जाने पर ऋषियों ने राजा, उसके ऋत्विजों तथा यज्ञ के अध्यक्षों की प्रशंसा की, और प्रसन्नतापूर्वक बारी-बारी से बोलने लगे।

कावे का उपदेश — वह मार्ग जो कभी विफल नहीं होता

प्रथम ऋषि कवि ने उत्तर दिया कि जिसका मन इस नश्वर शरीर को आत्मा मान लेने से सदा विचलित रहता है, उसके लिए समस्त मार्गों में सबसे सुरक्षित है भगवान् के चरण-कमलों की पूजा; ऐसी पूजा से समस्त भय पूर्णतः विलीन हो जाता है। उन्होंने समझाया, ये भक्ति-मार्ग स्वयं भगवान् द्वारा आत्मा की प्राप्ति के लिए उपदिष्ट हैं — इतने प्रभावी कि अज्ञानी भी इनका अनुसरण कर सकते हैं।

ये वै भगवता प्रोक्ता उपाया ह्यात्मलब्धये ।

अञ्जः पुंसामविदुषां विद्धि भागवतान् हि तान् ॥ ३४ ॥

ye vai bhagavatā proktā upāyā hy ātma-labdhaye añjaḥ puṁsām aviduṣāṁ viddhi bhāgavatān hi tān

अर्थ: जान लो कि आत्म-साक्षात्कार के लिए स्वयं भगवान् द्वारा उपदिष्ट उपाय ही भागवत-धर्म हैं, जिनके द्वारा अज्ञानी मनुष्य भी सहज ही लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 34)

कवि ने कहा, इन मार्गों का आश्रय लेकर मनुष्य कभी पथभ्रष्ट नहीं होता — जो नेत्र मूँदकर भी इन पर दौड़े, वह न ठोकर खाएगा न मिथ्या पग रखेगा। शरीर, वाणी, मन, इन्द्रिय, बुद्धि अथवा अपने स्वभाव से जो कुछ भी किया जाए, उस सबको परम भगवान् नारायण की भेंट रूप में समर्पित कर देना चाहिए। भगवान् से विमुख आत्मा माया के कारण अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाती है, इस मिथ्या धारणा में गिर जाती है कि शरीर ही आत्मा है, और भय से ग्रस्त हो जाती है। अतः विवेकी पुरुष को भगवान् की अनन्य भक्ति से पूजा करनी चाहिए, गुरु को साक्षात् देवता तथा अपने ही आत्मा के रूप में देखते हुए, और उस चंचल मन को शान्त करना चाहिए जिससे संशय उठते हैं।

भक्ति का आनन्दोन्माद

तब कवि ने उस मधुर परिवर्तन का वर्णन किया जो ऐसी भक्ति लाती है। भगवान् के शुभ अवतारों का श्रवण करते हुए तथा उनके कर्मों का गुणगान करने वाले नामों का कीर्तन करते हुए, मनुष्य को संसार में स्वच्छन्द विचरण करना चाहिए, उपहास के भय तथा आसक्ति से रहित। जिस भक्त का हृदय अपने प्रिय भगवान् के नामों के प्रेम से पिघल जाता है, वह सामान्य आचरण की सीमाओं से परे चला जाता है।

एवंव्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या

जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः ।

हसत्यथो रोदिति रौति गाय-

त्युन्मादवन्त्यति लोकबाह्यः ॥ ४० ॥

evaṁ-vrataḥ sva-priya-nāma-kīrtyā jātānurāgo druta-citta uccaiḥ hasaty atho roditi rauti gāyaty unmāda-van nṛtyati loka-bāhyaḥ

अर्थ: इस व्रत में दृढ़, अपने प्रिय भगवान् के नामों को गाते हुए हृदय पिघलता है, और प्रेम जाग उठने पर वह ऊँचे स्वर से हँसता है, रोता है, चिल्लाता है, गाता तथा उन्मत्त-सा नाचता है — सामान्य लोगों के व्यवहार से परे। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 40)

ऐसा भक्त, कवि ने आगे कहा, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, ज्योतिर्मण्डल, प्राणियों, समस्त दिशाओं, वृक्षों, नदियों तथा समुद्रों को — इन सबको भगवान् का ही शरीर मानते हुए — श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता है।



जाग्रत भक्त, प्रेम में पिघले हृदय से, अपने प्रिय भगवान् के नामों का कीर्तन करते हुए पवित्र आनन्दोन्माद में गाता और नाचता है (श्लोक 40)।

जहाँ भक्ति, वैराग्य तथा साक्षात्कार मिलते हैं

तब कवि ने प्रगति के निश्चित लक्षणों का एक सुन्दर दृष्टान्त दिया। जैसे भोजन करने वाले को प्रत्येक घास के साथ तृप्ति, पुष्टि तथा भूख से निवृत्ति मिलती है, वैसे ही भगवान् का आश्रय लेने वाले में तीन बातें एक साथ प्रकट होती हैं — भगवान् के प्रति भक्ति, उनका साक्षात् बोध, तथा अन्य सबसे वैराग्य।

इत्यच्युताङ्घ्रिं भजतोऽनुवृत्त्या

भक्तिर्विरक्तिर्भगवत्प्रबोधः ।

भवन्ति वै भागवतस्य राजं-

स्ततः परां शान्तिमुपैति साक्षात् ॥ ४३ ॥

ity acyutāṅghriṁ bhajato 'nuvṛṭtyā bhaktir viraktir bhagavat-prabodhaḥ bhavanti vai bhāgavatasya rājāṁs tataḥ parāṁ śāntim upaiti sākṣāt

अर्थ: इस प्रकार, हे राजन्, जो अच्युत भगवान् के चरणों की निरन्तर सेवा करता है, उसमें भक्ति, वैराग्य तथा भगवान् का साक्षात्कार एक साथ प्रकट होते हैं; और इन्हीं के द्वारा वह साक्षात् परम शान्ति को प्राप्त करता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 43)

हवि का उपदेश — भक्त के लक्षण

प्रसन्न होकर, राजा निमि ने फिर ऋषियों से भगवान् के भक्त के लक्षण बताने की प्रार्थना की: वह कैसे रहता है, कैसे व्यवहार करता और बोलता है, और क्या वस्तु उसे भगवान् को प्रिय बनाती है। द्वितीय ऋषि हवि ने भक्ति की श्रेणियों में भेद करते हुए उत्तर दिया। सर्वोत्तम भक्त समस्त प्राणियों में भगवान् को तथा समस्त प्राणियों को भगवान् में देखता है।

सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः ।

भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥ ४५ ॥

sarva-bhūteṣu yaḥ paśyed bhagavad-bhāvam ātmanaḥ bhūtāni bhagavaty ātmany eṣa bhāgavatottamaḥ

अर्थ: जो समस्त प्राणियों में भगवान् — आत्मा — की उपस्थिति देखता है, और समस्त प्राणियों को भगवान् में स्थित देखता है, वही सर्वोत्तम भक्त है। (स्कन्ध 11, अध्याय 2, श्लोक 45)



सर्वोत्तम भक्त प्रत्येक प्राणी के भीतर भगवान् को, तथा प्रत्येक प्राणी को भगवान् में विराजमान देखता है — यह सर्व-व्यापी, समान प्रेम की दृष्टि है (श्लोक 45)।

हवि ने समझाया, द्वितीय श्रेणी का भक्त भगवान् से प्रेम करता है, उनके भक्तों से मित्रता रखता है, अज्ञानियों पर करुणा करता है तथा द्वेषियों के प्रति उदासीन रहता है — फिर भी इनमें भेद करता है। सामान्य भक्त श्रद्धापूर्वक भगवान् की पूजा प्रतिमा में करता है, किन्तु अभी तक उनके भक्तों तथा अन्य प्राणियों की सेवा नहीं करता। हवि ने आगे परम भक्तों के गुणों का वर्णन किया: वे शरीर की जन्म-मृत्यु, भूख, थकान, भय तथा तृष्णा की माँगों से कभी अभिभूत नहीं होते; वे आत्मा को कभी शरीर की जाति या अवस्था से नहीं जोड़ते; वे अपनी तथा दूसरों की सम्पत्ति को समान भाव से देखते हैं, समस्त प्राणियों को समान एवं शान्त दृष्टि से निहारते हैं। तीनों लोकों के आधिपत्य के लिए भी, और आधे क्षण के लिए भी, ऐसा भक्त भगवान् के चरण-कमलों से विमुख नहीं होता। उनमें भगवान् की स्मृति सदा ताज़ी रहती है, और स्वयं भगवान् उस हृदय को कभी नहीं छोड़ते जिससे उनके चरण बँध जाते हैं।

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. भागवत-धर्म आत्मा को समस्त भय से मुक्त करता है। समस्त संवाद एक ही प्रश्न का उत्तर देता है — कौन-सा आचरण, श्रद्धापूर्वक सुना गया, मनुष्य को भय से मुक्त करता है? उत्तर है भगवान् के चरणों की प्रेममयी सेवा, जो स्वयं भगवान् द्वारा उपदिष्ट है (श्लोक 7, 33-34)।
2. यह मार्ग अज्ञानी के लिए भी खुला है। ये भक्ति-धर्म इतने कृपापूर्ण हैं कि जो “नेत्र मूँदकर” भी इनका अनुसरण करे, वह ठोकर नहीं खाता — भक्ति विद्वत्ता पर नहीं, अपितु सच्चाई पर निर्भर करती है (श्लोक 34-35)।
3. प्रत्येक कर्म भगवान् को समर्पित करें। जो कुछ भी हम शरीर, वाणी, मन अथवा बुद्धि से करते हैं, नारायण को अर्पित करने पर वह पूजा बन जाता है — साधारण जीवन को निरन्तर भक्ति में बदलते हुए (श्लोक 36)।
4. जाग्रत प्रेम आनन्दोन्माद में उमड़ पड़ता है। भक्ति के परिपक्व होने पर पिघला हुआ हृदय परम्परा से परे हँसता, रोता, गाता तथा नाचता है — एक संकेत कि प्रिय भगवान् के नाम ने सचमुच हृदय को पकड़ लिया है (श्लोक 40)।
5. भक्ति, साक्षात्कार तथा वैराग्य एक साथ बढ़ते हैं। जैसे प्रत्येक ग्रास के साथ तृप्ति, पुष्टि तथा भूख का अन्त, वैसे ही ये तीनों भक्त में एक साथ प्रकट होकर परम शान्ति की ओर ले जाते हैं (श्लोक 43)।
6. श्रेष्ठतम भक्त भगवान् को सर्वत्र देखता है। सर्वोत्तम भागवत प्रत्येक प्राणी को भगवान् में प्रतिष्ठित तथा भगवान् को प्रत्येक प्राणी में व्याप्त अनुभव करता है, और इस प्रकार अखण्ड स्मृति तथा समदृष्टि में जीता है (श्लोक 45)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में उस हर व्यक्ति के लिए एक शान्त आश्वासन है जिसने कभी स्वयं को आध्यात्मिक मार्ग के अयोग्य अनुभव किया हो। ऋषि किसी ऐसी तपस्या से आरम्भ नहीं करते जो हम कर न सकें, या किसी ऐसे दर्शन से जो हम समझ न सकें। वे सबसे कोमल तथ्य से आरम्भ करते हैं: हमारा मन इसलिए चंचल है क्योंकि हमने इस नश्वर शरीर को ही अपना आत्मा मान लिया है, और उसी एक भूल से हर भय जन्म लेता है। उनका उपचार बोझ नहीं, अपितु शरण है — भगवान् के चरणों का आश्रय लेना तथा उन्हें अपने दिनों की साधारण वस्तु अर्पित करना। हृदय को सबसे अधिक जो स्पर्श करता है वह है कवि का यह वचन कि जो “नेत्र मूँदकर” भी इस मार्ग पर दौड़े, वह नहीं गिरेगा। हमसे यह नहीं कहा जाता कि आरम्भ करने से पहले सम्पूर्ण मार्ग स्पष्ट देख लें; हमसे केवल इतना कहा जाता है कि श्रद्धा से आरम्भ करें, और भक्ति, बोध तथा मुक्ति को हममें एक साथ, ग्रास-दर-ग्रास बढ़ने दें, जब तक प्रिय नाम हृदय को न पिघला दें और स्वयं भगवान् वह अतिथि न बन जाएँ जो कभी विदा नहीं होता।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, कोई एक साधारण कर्म चुनें — बनाया गया भोजन, पूर्ण किया गया कार्य, की गई कोई दया — और आरम्भ करने से पहले उसे सचेत भाव से भगवान् को अर्पित करें, कवि की उस शिक्षा के भाव में कि जो कुछ हम करें, सब नारायण को समर्पित हो। अर्पित करते हुए, कोमलता से अपने प्रिय भगवान् का नाम जपें: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” यह छोटा-सा समर्पण भी आपको स्मरण कराए कि सम्पूर्ण जीवन पूजा बन सकता है, और सन्तों तथा पवित्र की ओर मुड़ा हुआ आधा क्षण भी, जैसा राजा निमि ने कहा, एक अमूल्य निधि है।

उपसंहार

एकादश स्कन्ध का द्वितीय अध्याय भागवत का महान् आन्तरिक विषय खोलता है: वह प्रेममयी भक्ति का मार्ग जो भगवान् को प्रसन्न करता है तथा समस्त भय को विलीन कर देता है। राजा निमि तथा नौ योगीन्द्रों की नारद-स्मृति के माध्यम से, हम ऋषि कवि को *भागवत-धर्म* प्रकट करते सुनते हैं — भगवान् के चरणों का आश्रय लेने, प्रत्येक कर्म उन्हें समर्पित करने, तथा उनके नामों को तब तक गाने का वह निश्चित, कृपापूर्ण, सर्वसुलभ मार्ग जब तक हृदय प्रेम में न पिघल जाए — और हम ऋषि हवि को उन कोमल लक्षणों का वर्णन करते सुनते हैं जिनसे भगवान् के भक्त पहचाने जा सकते हैं। हम सीखते हैं कि भक्ति, साक्षात्कार तथा वैराग्य एक साथ परिपक्व होकर आत्मा को परम शान्ति तक ले जाते हैं। जैसे-जैसे विवेकी राजा निमि के प्रश्न आगे बढ़ते हैं, शेष योगीन्द्र बारी-बारी से बोलेंगे, इसी अविनाशी ज्ञान के और भी गहरे पक्ष उद्घाटित करते हुए।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, *श्रीमद्भागवत महापुराण* (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, अध्याय 2, पृष्ठ 518–523।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका की पुनरावृत्ति नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-2-nimi-nau-yogendra-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट